उपसंहार.

अन्तिम तीर्थंकर श्रीमहावीरस्वामीके वचनोंकी उनके प्रमुख शिष्य इन्द्रभूति गौतमने व्दादशांग श्रुतके रुपमें ग्रंथ रचना की जिसका ज्ञान आचार्य परम्परासे क्रमश: कम होते हुए धरसेनाचार्यतक आया। उन्होंने बारहवें अंग दृष्टिबादके अन्तर्गत पूर्वोंके तथा पाचवें अंग व्याख्याप्रज्ञप्तिके कुछ अंशोंको पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंको पढाया। और उन्होंने वीर निर्वाण के पश्चात् ७ वीं शताब्दिके लगभग सत्कर्मपाहुडकी छह हजार सूत्रोंमें रचना की। इसीकी प्रसिध्दि षट्‌खंडागम नामसे हुई। इसकी टीकाएं क्रमश: कुन्दकुन्द, शामकुंड, तुम्बुलूर, समन्तभद्र और बप्पदेवने बनाई, ऐसा कहा जाता है, पर ये टीकाएं अब मिलती नही हैं। इनके अन्तिम टीकाकार वीरसेनाचार्य हुए जिन्होंने अपनी सुप्रसिध्द टीका धवलाकी रचना शक ७३८ कार्तिक शुक्ल १३ को पूरी की। यह टीका ७२ हजार श्लोक प्रमाण है।

षट्‌खंडागमका छठवां खंड महाबंध है। जिसकी रचना स्वयं भूतबलि आचार्यने बहुत विस्तारसे की थी। अतएव पंचिकादिकको छोड उसपर विशेष टीकाएं नहीं रची गई। इसी महाबंधकी प्रसिध्दि महाधवलके नामसे है जिसका प्रमाण ३० या ४० हजार कहा जाता है।

धरसेनाचार्यके समयके लगभग एक और आचार्य गुणधर हुए उन्हें भी व्दादशांग श्रुतका कुछ ज्ञान था। उन्होंने कषायप्राभृतकी रचना की। इसका आर्यमंक्षु और नागहस्तिने व्याख्यान किया और यतिवृषभ आचार्यने चूर्णिसूत्र रचे। इसपर भी वीरसेनाचार्यने टीका लिखी। किन्तु वे उसे २० हजार प्रमाण लिखकर ही स्वर्गवासी हुए। तब उनके सुयोग्य शिष्य जिनसेनाचार्यने ४० हजार प्रमाण और लिखकर उसे शक ७५९ में पूरा किया। इस टिकाका नाम जयधवला है और वह ६० हजार श्लोक प्रमाण है।

इन दोनों या तीनों महाग्रंथोंकी केवल एकमात्र प्रति ताडपत्रपर शेष रही थी जो सैंकडों वर्षोंसे मूडविद्रीके भंडारमें बन्द थी। गत २०।२५ वर्षोमे उनमेंसे धवला व जयधवलाकी प्रतिलिपियां किसी प्रकार बाहर निकल पाई हैं। महाबंध या महाधवल अब भी दुष्प्राप्य है। उनमेंसे

धवलाके प्रथम अंशका अब प्रकाशन हो रहा है। इस अंशमें व्दादशांगवाणी व ग्रंथ रचनाके इतिहासके अतिरिक्त सत्प्ररुपणा अर्थात् जीवसमासों और मार्गणाओं का विशेष विवरण है। सूत्रोंकी भाषा पूर्णत: प्राकृत है। टीकामें जगह जगह उद्‌धृत पूर्वाचार्योंके पद्य २२१ हैं जिनमें केवल १७ संस्कृतमें और शेष प्राकृतमें हैं, टीकाका कोई तृतीयांश प्राकृतमें और शेष संस्कृतमें है। यह सब प्राकृत प्राय: वही शौरसेनी है जिसमें कुन्दकुन्दादि आचार्योंके ग्रंथ रचे पाये जाते हैं। प्राकृत और संस्कृत दोनोंकी शैली अत्यंत सुन्दर, परिमार्जित और प्रौढ है।